सावित्री बाई फुले
जिंदगी से स्टेज तक....स्टेज से जिंदगी तक....

सावित्री बाई शहर में आ चुकी हैं क्या...?

फोन के दूसरे सिरे पर एक हड़बड़ायी सी आवाज उभरती है।

मैं मुस्कुराती हूं।

हां, सुषमा देशपाण्डे जी शहर में आ चुकी है।

उनके मीडिया से मिलने का समय, जगह वगैरह तय करते हुए मैं लगातार मुस्कुराती जाती हूं। सावित्रीबाई आ चुकी हैं...

.

पूछने वाले ने भले ही गलती से हड़बड़ी में सुषमा देशपांडे की जगह सावित्रीबाई का नाम ले लिया था लेकिन उसकी यह छोटी सी भूल बेहद खुशनुमा एहसास देकर गई थी। किस तरह चीजों के अर्थ बदल जाते हैं। हमारे गले में पड़े हमारे नाम कब हमारे कामों के आगे, हमारे जीने के ढंग के आगे बौने पड़ने लगते हैं...और इसका एहसास कितना सुखद होता है।

सुषमा देशपांडे 25 बरसों से सावित्रीबाई फूले के जीवन को उनके चरित्र को जिस शिद्दत से जी रही हैं क्या हैरत है कि वो खुद भी कई बार सावित्री ही महसूस करने लगती हों, और क्या हैरत है कि लोग उन्हें सावित्री नाम से ही पुकारने लगें।

कुछ सुनना, कुछ गुनना उन्हें– सुना था कि सुषमा देशपांडे अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन बंगलौर में सावित्रीबई पर एक मोनोलॉग कर रही हैं। इसके बारे में पहले से काफी सुन रखा था। इसी बीच उनके जयपुर, सिरोही में भी उनके प्ले होने की खबरें, रिपोर्ट्स वगैरह सामने आती रहीं। बंगलौर से मेधा जयपुर से अभिशेक जिस सुंदर ढंग से उनके नाटक के बारे में लिख रहे थे नाटक देखने की इच्छा और भी ज्यादा तीव्र होती जा रही थी। इसी बीच इसके उत्तराखंड में होने की खबर भी आ चुकी थी। हमारा उत्साह उफान पर था। इस बीच प्रदीप जी बंगलौर से हां, मैं सावित्रीबाई फूले देखकर लौट चुके थे। उन्होंने जो अनुभव साझा किये वो कमाल थे। कुछ वीडियो उन्होंने शेयर जिन्हें देखकर उन्हें जल्दी से जल्दी उत्तराखंड में देखने की इच्छा भी बढ़ रही थी।

उन्होंने अप्रैल के अंतिम सप्ताह की तिथियां हमारे लिए मुक्त रखी थीं। चुनाव सर पर थे। उत्तराखंड में मतदान की तारीख थी 7 मई। हमें अंदाजा था कि थोड़ी प्रशासनिक दिक्कतें आयेंगी लेकिन टीम को आत्मविश्वास था कि सब ठीक हो जायेगा और बेहतर ढंग से हो जायेगा।

उत्तराखण्ड में उनका होना, होना सलीके से – यह सिर्फ एक नाटक नहीं था जिसे शहर में होना था। जिसे उत्तराखंड अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन की टीम को करवाना था। यह मोहब्बत थी, उस काम से जिसे कोई जिंदगी बनाकर जी रहा था। यह प्यार था उस साहस से जिसने 1831 में जन्मी एक लड़की को भारत की पहली महिला शिक्षिका होने का गौरव दिया। यह प्रतिरोध था उस व्यवस्था से जिसके खिलाफ खड़े होकर एक मिसाल कायम की सावित्रीबाई फूले ने। यह सम्मान था उस विचार का जिसने उन्हें इतिहास के पन्नों में दर्ज ज्योतिबाफूले की पत्नी मात्र होने से इतर उनके स्वतंत्र व्यक्तित्व के तौर पर देखा। बंगलौर की कम्युनिकेशन और इंगेजमेंट टीम ने उन पर एक शानदार पुस्तिका निकाली थी, जिसे पटवा शैली में तैयार किया गया था। यह सब हमारे उत्साह को बढ़ाने के लिए, हौसला देने के लिए और उनकी उत्तराखंड में आमद के बेहतरीन इंतजाम करने की प्रेरणा के लिए काफी था।

पहले योजना थी कि इसे अल्मोड़ा जिला संस्थान में किया जायेगा। कुमायूं में अभी हमारी नई आमद है तो इस प्ले के वहां होने का अलग ही महत्व था। लेकिन फिर कुछ साथियों का विचार आया कि हम सीडिंग जिलों के बारे में भी तो सोच सकते हैं। सुशमा जी पहले ही बता चुकी थीं कि उन्हें किसी भी तरह की यात्रा करने में कोई परेशानी नहीं होती, बल्कि दूरस्थ इलाके के लोगों से मिलने में उन्हें अच्छा लगता है। इधर कुमायूं में पिथौरागढ़, चम्पावत, बागेश्वर, नैनीताल जिलों में सीडिंग का काम तेजी से चल ही रहा था। तो सीडिंग जिले में इस प्ले के होने के तमाम महत्व नज़र आये। किसी शहर की ओर दोस्ती का हाथ बढ़ाने का इतना मौजूं मौका हमारे सामने था। पिथौरागढ़ में नाटक होना तय हुआ।

देहरादून टीम ने मिलकर जब बात की तो इस सुझाव पर आम सहमति बनी कि बालिका शिक्षा की हिंदुस्तान में बुनियाद रखने वाली सावित्रीबाई के चरित्र को नाटक के माध्यम से शहरवासियों तक ले जाने के इस मौके पर उत्तराखंड में बालिका शिक्षा के संदर्भों पर भी बात हो तो बेहतर हो सकता है। प्रिया शुक्ला व अन्य साथियों ने इस जिम्मेदारी को आगे बढ़कर अपनाया।

उत्तराखंड में बालिका शिक्षा को लेकर काम करने वाले स्कूलों की सूची बनी। इसमें सौ साल से भी ज्यादा लंबा सफर तय करने वाले स्कूलों के भी नाम आये और सरकारी योजना केजीबीवी का भी जिक्र हुआ। जिक्र हुआ उत्तराखंड के उन हिस्सों का जो पहले उत्तर प्रदेश का हिस्सा थे।

शो मस्ट गो ऑन – इधर 27 अप्रैल करीब थी, उधर कुछ चुनौतियां भी सर उठा रही थीं। इलेक्शन के चलते शहर की संवेदनशीलता का और प्रशासन की वाजिब सतर्कता का हमें अहसास था। हमने शहर के टाउनहॉल में नाटक करने की सोची थी लेकिन अंदाजा यह भी था कि हो सकता है प्रशासन इसकी इजाजत न दे इसलिए प्लान बी भी तैयार था। हॉल देखकर लौटे बलूनी जी और प्रदीप जी ने बताया कि हॉल नहीं मिल सकता। अब बारी प्लान बी पर काम करने की थी। लेकिन हम उत्तराखंड में पिछले दस वर्शों से काम कर रहे हैं। सरकार के साथ मिलकर। प्रशासन के लोगों से हमारे मीठे रिश्ते हैं। और हम भी बेवजह की खींचतान में यकीन नहीं करते।

तो प्लान बी यानी किसी कॉलेज के ऑडिटोरियम में नाटक करने की बात आगे बढ़ने को हुई। अंबरीश बिष्ट जो हमेशा प्रशासन के साथ बातचीत करते रहते हैं उनका सुझाव था कि हम शहर में कहीं भी नाटक करें, प्रशासन की इज़ाजत तो लेनी ही होगी। तो डीएम को इजाजत के लिए पत्र लिखते है और साथ ही टाउन हॉल में नाटक करने की अपनी इच्छा भी जाहिर करते हैं। आनन–फानन में पत्र तैयार हुआ और चंद घंटों में शहर में नाटक करने की परमीशन और टाउन हॉल हेतु जिलाधिकारी की स्वीकृति दोनों हमारे पास थीं।

उधर पिथौरागढ में भी टाउनहॉल की स्वीकृति मिल गई थी। उधमसिंह नगर में अभी प्रक्रिया जारी थी। तीनों जगहों पर लोगों को आमंत्रित करने का सिलसिला शुरू हुआ। शिक्षा के क्षेत्र में काम करने वाले हमारे नये–पुराने साथी, शहर की संस्कृति, कला व रंगमंच से जुड़े साथी स्कूल में पढ़ने वाली किशोरियां, गृहणियां, मीडिया के लोग सामयिक मुद्दों में दिलचस्पी लेने वाले लोग और वो सब भी जो इनमें से किसी श्रेणी में नहीं आते, हमारे मेहमान होने थे। हम जिससे भी बात करते वो इसको लेकर काफी उत्साहित दिखता। इस बीच कई लोगों ने कहा कि उन्हें तो पता ही नहीं था कि सावित्रीबाई फूले देश की पहली महिला शिक्षक हैं।

हालांकि इस चुनौतीपूर्ण काम में दो बड़ी दिक्कतें आईं। एक पिथौरागढ़ में टाउनहॉल में मिली स्वीकृति कैंसिल हो गई लेकिन उसकी जगह प्रशासन ने दूसरी जगह नाटक करने की परमीशन दे दी। हमारे बैनर, होर्डिंग्स बन चुके थे, आमंत्रण पत्र छप चुके थे...पिथौरागढ़ साथियों की आवाज में एक उदासी थी लेकिन अगले ही पल हमने मिलकर उसे उत्साह में बदल लिया। देहरादून के साथी बिजेन्द्र बलूनी ने होर्डिंग और बैनर कुछ घंटों में दुरुस्त कराने का जिम्मा लिया और राजू मेहर ने कहा, कोई बात नहीं, इस शहर से हमारे गाढ़े रिश्ते हैं हम कोई रास्ता निकाल लेंगे। थोड़ी ही देर में उन्होंने फोन पर बताया कि सरस्वती देव सिंह इंटर कॉलेज के प्रधानाचार्य अशोक

पंत ने सहर्ष अपने कॉलेज में नाटक करने का न्योता दिया है। राजू भाई की आवाज में फोन पर जो थोड़ी देर पहले मायूसी की सर्द लहर थी वो अब जोश में तब्दील हो चुकी थी। हम सब वापस उत्साह के उसी शिखर पर थे।

पिथौरागढ़ में तो चुनौती आकर बगल से गुजर गई लेकिन उधमसिंह नगर में उसका जाने का मन नहीं हुआ शायद। नाटक के ठीक दो रोज पहले वहां के जिलाधिकारी ने चुनावों के मद्देनज़र शहर में नाटक करने की स्वीकृति को अस्वीकार कर दिया। न सिर्फ टाउनहॉल में बल्कि कहीं भी अब नाटक नहीं किया जा सकता था। बैनर बन चुके थे, निमंत्रण दिये जा चुके थे। इस सबके बीच यह खबर। जाहिर है पूरी टीम उदास थी। तय हुआ, कि नाटक तो होगा लेकिन कार्यालय के सभागार में। आखिर जिंदगी का यही तो नियम है कि रुके बिना चलते जाना...

जिसका हमें था इंतजार– आखिर हमारे इंतजार की घड़ियां खत्म हुईं। सुबह से सुशमा जी से हम फोन पर संपर्क में थे और करीब तीन बजे उनकी शहर में आमद हुई। हमें उनकी सफर की थकान का अंदाजा था। पूना से दिल्ली, दिल्ली एयरपोर्ट पर एक लंबा इंतजार फिर देहरादून....उनके आराम की व्यवस्था चाक चौबंद थी। मैंने उनका शहर में स्वागत किया और उनसे कहा कि आप आराम करिये, हम लोग शाम को आपसे मिलने आते हैं।। लेकिन मैं शायद यह भूल गई थी कि जिस स्त्री से मेरा सामना होने को है वो कोई आम स्त्री नहीं थी। वो उर्जा और साहस से भरपूर स्त्री थी। थकान उनसे दूर भागती थी। उन्होने कहा, आराम वाराम क्या करना है, मैं रूम पर सामान रखकर ऑफिस आउंगी, सभी साथियों से मिलने।

मैं प्रदीप जी, अंबरीश जी उन्हें होटल से लाने के लिए गए और ऑफिस में मुकुल जी ने उनके अनौपचारिक स्वागत की व्यवस्था की। होटल की लॉबी में हम उनका इंतजार कर रहे थे कि वो सीढ़ियों से उतरती नजर आई। मेरी उनसे वो पहली मुलाकात थी। नाजुक मौकों पर न जाने कहां से आंखों में एक नदी उतर आती है हमेशा से...मैं उनके सामने झुकी और उन्होंने गले से लगा लिया। झुकना सिर्फ देह से नहीं होता, मन से होता है, झुकना उस उम्र के लिए नहीं, ओहदे के लिए नहीं, ज्ञान के लिए लिए, जीने की सही राह चुनने के लिए, जिजीविशा के लिए, सार्थक कुछ कर पाने के लिए....सुषमा जी को तो शायद पता भी नहीं होगा कि उनसे मिले बिना ही हम तो उनके सजदे में झुक चुके थे, उम्र भर के लिए। मुझे नहीं पता था कि मुझे इस नाटक के बहाने जिंदगी भर के लिए एक पक्की सहेली मिलने वाली है...शोख... चंचल...जिद्दी...जिंदगी से भरपूर....

ऑफिस में जब बात चली तो– देहरादून पहुंचकर उन्होंने ऑफिस आने की इच्छा जाहिर की। ऑफिस में मौजूद साथियों से वो दिल खोलकर मिलीं। पूरा ऑफिस देखा और बातचीत का सिलसिला शुरू हुआ। बातों में बातें थीं, चिंताएं थीं, देश की, समाज की, राजनीति के रंगों ने किस तरह समाज को बदरंग किया है इसकी बात थी, किस तरह पत्रकारिता से, थियेटर की ओर बढ़ती चली गई उनकी मुट्ठियों में तमाम हैरत से भर देने वाले अनुभव थे। उत्तर प्रदेश की राजनीति से लेकर महाराष्ट्र की राजनीति तक जातीय समीकरणों पर बनते बिगड़ते राजनैतिक उठापटक से लेकर हाशिए के लोगों की चिंताओं तक सुषमा देशपाण्डे की चिंताएं आकार लेती हैं।

इंतजार के आखिरी पल– आखिर वो पल आ ही गये जिनका हम बेसब्री से इंतजार कर रहे थे। शाम ठीक साढ़े चार बजे रनदीप और मुकुल जी जब उन्हें लेने के लिए होटल रिलेक्स पहुंचे तो उन्होंने देखा कि उनके सामने साक्षात सावित्रीबाई फूले सीढ़ियों से उतर रही हैं। सुषमा देशपाण्डे कमरे में छूट गई हों जैसे....वो कहती हैं, मैं पैदल चली जाउंगी गाड़ी की क्या जरूरत है। वही मराठी साड़ी, वही माथे पर लंबी काली लकीर, गले में मंगलसूत्र, सर पर आंचल वो हमारे साथ हॉल में पहुंचती हैं...जहां पहले से मौजूद साथी और उनके प्रशंसक उनका स्वागत करते हैं।

वो चुपचाप दर्शकों के बीच, दर्शकों की तरह है। ठीक समय पर सुभाश रावत की आवाज हॉल की अफरा–तफरी को तरतीब देती है और वो इस खूबसूरत शाम के संचालन का जिम्मा संभालते हैं। वो अपने दिलकश जादुई अंदाज में लोगों का स्वागत करते हैं। इस शाम के संदर्भ को लोगों के सामने रखते हैं, इस नाटक की अहमियत से वाकिफ कराते हैं और बताते हैं अजीम प्रेमजी फाउंडेशन के विजन और काम के बारे में। किस तरह यह नाटक या इस तरह की तमाम अन्य कलात्मक विधाएं शिक्षा की फसल में बरसात के पानी की तरह कारगर होती है। इसी बीच सुभाष सावित्रीबाई फूले और सुषमा देशपाण्डे के संक्षिप्त परिचय दोनों के बीच की कड़ी जुड़ने के संदर्भ और सुषमा देशपाण्डे जी को मंच पर आमंत्रित करने के लिए मुझे आवाज देते हैं।

सुशमा देशपाण्डे मंच पर आती हैं तालियों की आवाज से हॉल गूंजता है और तालियों के लिए किसी को कहना नहीं पड़ता....वो दिल से आती हुई आवाज थी....

हां, मैं सावित्रीबाई फूले– नमस्ते जी, मैं आप लोगों से बातें करने आई हूं। वैसे तो मेरी भाषा हिंदी नहीं है। शायद मैं अच्छी तरह से हिंदी बोल भी न पाउं फिर भी आप लोगों के साथ जी भर के बातें करने का जी चाहता है। अब देखिए ना मेरा जन्म नायगांव में....इस तरह सर पर पल्ला लिए नीले रंग की सूती पुरानी सी साड़ी में स्टेज पर चढ़ी वो स्त्री सभागार में बैठे हर व्यक्ति का हाथ पकड़कर समय के उस हिस्से में ले जाती है जहां शिक्षा वो भी स्त्री के लिए, या जो मजाक की बात थी या ख्वाब की।

3 जनवरी 1831 को महाराष्ट्र के सतारा जिले के नएगांव में जन्मी वो नन्ही सी बालिका जैसे–जैसे बड़ी होती गई समाज की कुरीतियां, छुआछूत, रूढ़िवादिता आदि उसे झकझोरने लगे। लेकिन हिम्मत कहां से आती इन सबके खिलाफ लड़ने की। ज्योतिबाफुले ने न सिर्फ उन्हें पढ़ना सिखाया बल्कि आत्मविश्वास भी दिया। सावित्री सच की राह पर चल पड़ी। रास्ते में मिलने वाले पत्थर, निंदा, गालियां कुछ भी उनके हौसलों को डिगा नहीं सका। सफर चलता गया...चलता गया...

यह नाटक कई मायनों में अपना अलग महत्व रखता है। इसकी साधारणता इसे आश्चर्यजनक रूप से असाधारण बनाती है। मंच पर कोई साज–सज्जा नहीं, किसी तरह की लाइट या साउंड नहीं, कोई कलात्मक कारीगरी नहीं, बस एक जरा सी जगह और एक लोटा पानी। सुषमा देशपांडे की उर्जा इस नाटक की जान है। लगातार कई पात्रों में ढलती जाती है। सेकेंड्स में उनके मूड, डॉयलॉग बोलने का ढंग सब बदल जाता है, वो भी बेहद सहजता से। यह कम महत्वपूर्ण नहीं है कि एक तरफ जहां मंच की तमाम साज–सज्जा, संगीत, रोशनी के तमाम खेल से नाटक के उस वातावरण को सज्जित किया जाता है, जिस दौर की स्क्रिप्ट है ताकि दर्शकों को उससे नाता बनाने में परेशानी न हो। जबकि यहां सिर्फ अपनी उपस्थिति और संवाद अदायगी भर से पल भर में सुषमा जी उस समूचे वातावरण को न सिर्फ मंच पर बल्कि पूरे हॉल में कायम कर पाने में सफल हो जाती हैं।

वो हॉल में बैठे हर व्यक्ति से मानो सीधे संवाद कर रही हों। एक मिनट का डिसकनेक्ट नहीं होता। वो डेढ़ सौ बरसों की यात्रा पलों में तय करती हैं। अचानक वो आज के दौर में लौटती हैं और दर्शकों से सवाल करती हैं, आजकल ये जात–पात का शोर कुछ ज्यादा नहीं सुनाई दे रहा है?

नाटक के बाद, नाटक के दौरान– नाटक खत्म हो चुका था। यह पहली बार था कि मीडिया के छायाकार हों या हॉल की साज–सज्जा का ख्याल रखने वाले साथी सब मंत्रमुग्ध नाटक के पूरे होने तक नाटक से बावस्ता रहे। न कोई पर्दा उठा था न कोई पर्दा गिरा था। उनके संवादद से नाटक शुरू हुआ था और संवाद से ही खत्म हो गया। नाटक के बाद उन्होंने दर्शकों से संवाद कायम किया। पच्चीस बरसों का सफर तय करने के दौरान उनके अनुभवों पर बात हुई, इस दौरान आए हुए सामाजिक बदलावों पर लोगों के अलग–अलग तरह की प्रतिक्रियाओं पर बात हुई। इस नाटक पर कोई राजनैतिक आक्षेप तो नहीं लगा? एक पूरी पीढ़ी बनने की उम्र होती है पच्चीस वर्ष तो क्या कुछ बदला इतने समय में समाज में और नाटक में। विदेशों में इसके मंचन के दौरान कैसी प्रतिक्रिया रही आदि तमाम सवालों के जवाब देते हुए सुषमा जी ने कुछ बातें कहीं–

- मैं यह चाहती हूं कि मेरे सिवा भी लोग इस नाटक को करें, इसके लिए उन्हें मुझसे इज़ाजत लेने की भी जरूरत नहीं है। इस सावित्री के विचार को खूब आगे बढ़ाना ही मेरा मकसद है और चाहती हूं यह आप सबका मकसद भी बने।
- मुझे यह नाटक दूर–दराज के इलाकों में, झोपड़ पट्टियों में, गांव की चौपालों में किशोरी लड़कियों के बीच करना ज्यादा रुचिकर लगता है।
- इन पच्चीस सालों में मुझे इतना बदलाव तो नहीं आया दिखता कि इस नाटक की जरूरत ही कम होने लगती। बल्कि वो तो बढ़ ही रही है।
- आज भी जाति–पाति की बातें खूब सुनने में आती हैं। हमको क्यों लगता है कि कोई इस तरह ढेर सारी बातचीत के बाद शाम को विराम मिला। चाय के वक्त ढेर सारी लड़कियां उनके गले लगीं। कुछ के आंसू छलके, कोई उनके साथ चल पड़ने को तैयार थी।

अगले सफर पर– उसी रात उधमसिंह नगर की यात्रा इंतजार में थी। उधमसिंह नगर में हमें सार्वजनिक जगह पर नाटक करने की अनुमति नहीं मिली थी। तो तय हुआ था कि ऑफिस के सभागार में अपने साथियों के बीच यह

नाटक होगा। उन्होंने कहा, यह सब तो चलता ही रहता है। इसमें परेशान होने वाली कोई बात नहीं है। इस बीच उन्होंने अज़ीम प्रेमजी स्कूल देखने की इच्छा जाहिर की। नाश्ते के तुरंत बाद हम दिनेशपुर स्कूल देखने के लिए निकल पड़े। वहां बच्चों से मिलकर, साथियों से मिलकर वो काफी खुश हुईं। वहां से हम सीधे ऑफिस गए। दो बजे से नाटक होना था और घड़ी एक बजा रही थी। दस मिनट के अंदर सुशमा देशपांडे सावित्रीबाईफूले में परिवर्तित हो गईं।

ठीक ढाई बजे नाटक शुरू हुआ। जर्फताज, प्रियंवद और स्मृति ने स्वागत की कमान संभाली और उसके बाद सुशमा जी ने। पल भर में उधमसिंह नगर का वह मीटिंग हॉल 18वीं सदी के एक हिस्सा बन चुका था।

नाटक हमेशा की तरह खत्म होने के साथ ही देखने वालो की आखों में नमी और मन में भाव विह्वलता छोड़ गया था। नाटक के खत्म होने के बाद उन्हें एक कप गर्म बिना शक्कर वाली चाय की दरकार होती है। वो साथियों से बातचीत करती है। इसके बाद ढलते हुए दिन के साथ हम लंच करते हैं।

हर प्रस्तुति के बाद एक संतुष्टि एक सुकून साथ चल पड़ता है। अगले दिन हमें सुबह पिथौरागढ़ के लिए निकलना था। हमने तय किया कि यह शाम हम मिलकर खूब मस्ती करेंगे। गप्पे लगायेंगे। नहा–धोकर मैं उनके कमरे में पहुंची। चाय वो मंगवा चुकी थीं और मैं उनसे खूब सारी बातें करने को उत्सुक थी। उनका बचपन, उनकी जवानी, उनका करियर, उनका संघर्श उनकी स्टोरीज, पत्रकारिता, उनके दूसरे नाटक न जाने क्या–क्या न बात हुई। शाम सिमट कर पहलू में आ छुपी थी। हम डिनर के लिए चल पड़े थे। इस तरह की बातचीत काफी सघन होती है। एक रिश्ता बनता है, अपने आप से। एक–दूसरे से। भीतर की यात्रा होती है। जाहिर है इसके बाद एक गहरी चुप्पी की दरकार होती है। हम साथ थे, लेकिन खामोश थे। डिनर के बाद हम टहल रहे थे लेकिन खामोशी के साये में। वो संभवतः अतीत के किसी टुकड़े के साथ और मैं उनके जिये हर लम्हे, उनकी जिंदगी जीने की उत्कंठा, जिजीविशा और शिद्दत के साथ।

पिथौरागढ़ की यात्रा– सुषमा जी की उत्तराखंड में यह पहली यात्रा थी। पिथौरागढ़ उत्त्राखंड का खूबसूरत जिला है। सैलानी यहां अक्सर कम ही पहुंच पाते हैं। उधमसिंह नगर से यहां की दूरी ढाई सौ किमी ही है। रास्ते थोड़े ऊबड़–खाबड़ जरूर हैं लेकिन रास्ते का सौन्दर्य उन उबड़ खाबड़ रास्तों में रंगत ही भर रहे होते हैं। हम करीब साढ़े नौ बजे पिथौरागढ़ के लिए रवाना हुए। अब इस सफर में उत्तराखंड की पूरी कम्युनिकेशन व इंगेजमेंट टीम शामिल हो चुकी थी। उत्तरकाशी से संजय, सेमवाल, प्रमोद पैन्यूली, उधमसिंह नगर से जर्फताज व स्मति, देहरादून से मैं रनदीप, प्रदीप जी। अल्मोड़ा से निधी और तपस सीधे पिथौरागढ़ पहुंचने वाले थे। सबका जोश देखने वाला था। आखिर यह सीडिंग डिस्ट्रिक्ट की पहली इवेंट जो थी और हमारे साथ थीं सुशमा देशपांडे।

सुषमा जी अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन की टीम से उनके विजन से और काम से बहुत खुश थी। उन्होंने कहा कि आप लोगों का काम और काम के प्रति लगन व समर्पण देखकर ही मैंने इस नाटक को हिंदी में करने का मन बनाया।

अच्छा लगता है आम लोगों के बीच होना। हमारा सफर शुरू हो चुका था। हम पूरी मस्ती के मूड में थे। सत्तर के दशक के गाने गाड़ी में बज रहे थे। हम सबके चेहरे भी रास्तों की तरह खिले–खिले थे। सुषमा जी भी गानों को गुनगुना रही थीं। हंसी मजाक, गाना गुनगुनाना यह सब चल ही रहा था कि एक जगह गाड़ी रुकी। पता चला कि यह खटीमा है। पकौड़ी चौराहा। हंसी आ गई न आपको भी ये नाम सुनकर? मुझे भी आ गई थी। सड़क के किनारे पल्ली से ढंकी एक छोटी सी दुकान पर हम सबने लगभग धावा बोल दिया। उसकी छोटी सी दुकान उस वक्त हमें पंच सितारा होटल से भी ज्यादा खूबसूरत लग रही थी। पीठ पर गिरती गर्म हवाएं और मेज पर रखा गर्म पकौड़ों व चाय का इंतजार। इंतजार के दौरान जर्फताज ने बताया कि इस जगह के पकौड़े काफी प्रसिद्ध हैं। इस जगह पर पकौड़ों की इतनी दुकानें हैं कि यह चौराहा पकौड़ी चौराहा ही हो गया है। थोड़ी ही देर में मेज पर गर्मागर्म पकौड़े रखे थे। तरह–तरह के पकौड़े, छोटी–छोटी कटोरियों में चटनी और चाय...आहा....

पकौड़ों के स्वाद को समेटे हुए सफर फिर शुरू हो गया। लंबा सफर। दिलकश रास्ते....बेहतरीन गाने...तकरीबन तीन बजे हमने लंच ब्रेक लिया। लोहाघाट पर न कोई बड़ा रेस्तरां, न कोई दुकान। बस एक छोटी सी दुकान, जहां खाना तैयार तो नहीं था, लेकिन हमारे लिए तुरंत खाना बनाने में उसने उत्साह दिखाया। उधर दाल, चावल, आलू बैंगन की सब्जी, भांग की चटनी और रोटी बनने लगी इधर हम लोग सफर की थकान उतारने के ठीहे तलाशने लगे। कोई उस किनारे तो कोई उंचे टीले पर जाकर लुढ़क गये। सुशमा जी भी इस लुढ़कने और टहलने के खेल में हमारे साथ थीं

भूख पेट में लहक रही थी। यह एक घंटे का ब्रेक था। इस तरह खाना बनना, उसका इंतजार और फिर खाना एक यादगार यात्रा की महत्वपूर्ण कड़ी बन गया। अब सफर का छोटा सा हिस्सा बचा था। करीब ढाई घंटे का सफर बाकी था। यहां से चले तो सीधे पिथौरागढ़।

दिन अपनी पोटली बांधकर जाने को तैयार था। पिथौरागढ़ की दिलकश शाम ने हमारा स्वागत किया। साथ ही राजीव शर्मा, राजू मेहर, केसी, श्रवण, निधी और तपस भी वहां मौजूद थे। केएमवीएन के खूबसूरत गेस्ट हाउस और पिथौरागढ़ के मोहक सौन्दर्य ने रास्ते की सारी थकान को पल भर में उड़न छू कर दिया।

पिथौरागढ़ में सावित्रीबाई– अल्सुबह हर कोई अपने–अपने हिसाब से कोई घूमने निकला, कोई देर तक सोता रहा। नाश्ते के ठीक बाद एक मीटिंग हुई जिसमें शाम के कार्यक्रम की मिनटवार योजना बनी। हॉल में पोस्टर लगने से लेकर जनरेटर और पीने के पानी की व्यवस्था तक। आने वाले लोगों की लिस्ट को दोबारा खंगालने और मीडिया मैनेजमेंट तक। माइक और स्टेज की व्यवस्था तक।

किसी शहर से रिश्ता बनाने के लिए सबसे पहले वहां से दिल लगाना पड़ता है। श्रवण, केसी और राजू मेहर ने इस शहर से जिस तरह से दिल लगा लिया था शाम के नाटक का कोई तनाव बचा ही नहीं था। अज़ीम प्रेमजी फाउंडेशन का कोई पहला कार्यक्रम था शहर में लेकिन शाम को सभागार में उमड़ी भीड़, लोगों का अपनापन, जुड़ाव देखकर लगा कि टीम लंबे समय से यहां काम कर रही है वो भी गहराई से जुड़कर। ये उन्हीं बीजों से फूटे हुए कल्लों की खुशबू व रौनक है।

हां, मैं सावित्रीबाई फूले– हम सब हॉल में लंच के बाद ही पहुंच गये थे। ठीक पांच बजे रनदीप, सुषमा जी को लेकर सरस्वती देव सिंह इंटर कॉलेज पहुंची जहां यह नाटक होना था। हॉल खचाखच भरा हुआ। किशोरियां, टीचर्स, गृहिणियां पिथौरागढ़ के शिक्षा जगत से जुड़े लोग संस्कृतिकर्मी लेखक युवा सब मौजूद थे। लोग खड़े होकर भी नाटक देखने में मशगूल थे, जमीन पर बैठकर भी। राजू मेहर ने शाम का आगाज़ किया। राजीव शर्मा ने फाउंडेशन के विज़न व मिशन के बारे में संक्षिप्त परिचय लोगों से साझा किया। केसी ने नाटक का परिचय दिया व सुषमा जी का स्वागत किया। फिर मंच सुशमा जी का हुआ और ऑडियंस का दिल भी, जेहन भी।

वो ऑडियंस के मुताबिक, स्टेज के मुताबिक काम करने की आदी हैं। उनके कोई नखरे नहीं होते हैं। नाटक शुरू हुआ, नमस्ते! मैं आप लोगों के संग बातें करने आई हूं....बस कि पहला सिरा ही वो इतनी मजबूती से पकड़ती हैं दिलों का कि बीच में इधर–उधर होने की कोई गुंजाइश ही नहीं। किस तरह अक्षरों की दुनिया तक पहुंचने के लिए, हम भी इंसान हैं, ऐसा महसूस करने के लिए, समाज में सबका बराबर सम्मान है, हक है इस बात को महसूस करने के लिए कितना संघर्श करना पड़ा था सावित्री को। कितना साहस था उसमें....ज्यो–ज्यों नाटक आगे बढ़ रहा था ऑडियंस नाटक में जज्ब होती जा रही थी। नाटक के खत्म होने के बाद संवाद होना था। भरी आंखों से इतना प्रेम छलक रहा था लोगों के कि सवाल मानो बह गये हों सारे। सामने बैठी बच्चियों से राजीव ने कुछ पूछने को कहा, तो एक बच्ची उठी। उसने कहा कि वो यह नाटक जिंदगी भर भूल नहीं पायेगी। इसके बाद दूसरी बच्ची उठी, लेकिन इसके पहले कि वो कुछ भी बोल पाती, उसके आंसुओं ने उसका गला ही रोक दिया। वो मंच पर फफक कर रो पड़ी। सुषमा जी ने उसे गले लगाया और उसके आंसुओं को अपने आंचल में समेटा। दुनिया का बड़े से बड़ा सम्मान उन मासूम आंसुओं के आगे सर झुकाये खड़ा था। उस लड़की ने टूटी हुई सिसकियों के बीच बताया कि उसकी सहेली के साथ भी ऐसा होता था। वो पढ़ना चाहती थी लेकिन उसे पढ़ने नहीं दिया जाता था। एक बार वो पढ़ने के लिए उसके घर आई तो उसके घरवाले उसे मारते हुए वापस ले गए। यह हिंदुस्तान के एक बहुत बड़े सच की छोटी सी झलक थी जो उस बच्ची ने साझा की। बालिका शिक्षा के तमाम आंकड़ों को मुंह चिढ़ाता सच।

शाम सिमट रही थी। भावुकता थम नहीं रही थी। कॉलेज के प्रधानाचार्य अशोक पंत ने इस भावुकता को और भी गाढ़ा कर दिया जब उन्होने धन्यवाद व आभार प्रकट करते हुए कहा कि यह नाटक पिथौरागढ़ की स्मृतियों में हमेशा के लिए दर्ज हो गया है।

नाटक खत्म हो चुका था, शहर से रिश्ता जुड़ चुका था। लोगों में काम करने का जोश बढ़ रहा था। दूर से आई एक शिक्षिका सुषमा जी से पूछ रही थी कि किस तरह वो उन मुश्किलों को दूर करे जो उसे पढ़ाने की राह में आती हैं.... सवाल जब उगने लगें तो समझ लेना चाहिए कि बदलाव की जमीन तैयार हो रही थी। सवालों के जवाब मिलना जरूरी नहीं होता लेकिन सवालों का होना बहुत जरूरी होता है....सुषमा जी ऐसे सवालों की खुशबू से संतुष्ट थीं।